Received: Jul '23
Revised:
Accepted: Aug '23

© 2023 by the authors. This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY) license (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/).

IMPORTANCE OF HINDI DRAMA IN MODERN EDUCATION
आधुनिक शिक्षा में हिंदी नाटक का महत्व

डॉ. अतुल कुमार गौतम
शिक्षाविद्

प्रस्तावना :–

हिंदी नाट्य साहित्य का आरंभ आधुनिक काल से होता है। हिंदी से पहले संस्कृत और प्राकृत में समृद्धि नाट्य परंपरा थी। लेकिन हिंदी नाटकों का विकास आधुनिक युग से संभव हो सका। मध्यकाल में रासलीला, रामलीला, नौटंकी आदि का उदय होने से जन नाटकों का प्रचलन बढ़ा। यह नाटक मनोरंजन के प्रमुख साधन थे। नाटक की परंपरा राजपूत काल तक चलती रही, लेकिन मुगल काल में इस कला को धक्का लगा आंग्ल शासन काल में भारतीय पाश्चात्य साहित्य के निकट आए तथा साथ ही संस्कृत साहित्य का पुनुद्वार हुआ, जिसके कारण कई प्रभावशाली नाटकों की रचना हुई स बंगाल में बंकिम चंद्र एवं रविंद्र नाथ टैगोर ने नाटकों के क्षेत्र में विशेष योगदान दिया। हिंदी में भी इस दिशा में पर्याप्त प्रगति हुई। संस्कृत के नाटकों का अनुवाद करने के अतिरिक्त मौलिक नाटकों की भी रचना की गई। जयशंकर प्रसाद के नाटक हिंदी साहित्य में अपना विशेष स्थान रखते हैं।

नाटक की परिभाषा :–

नाटयाचार्य भरतमुनि के अनुसार किसी भी दशा के अनुकरण को नाटक कहते हैं। नाटक की सबसे सुंदर परिभाषा नाट्य शास्त्र में विद्वान अभिनव भारत ने इन शब्दों में की है। किसी प्रसिद्ध या कल्पित कथा के आधार पर नाट्यकार द्वारा चित्र रचना के अनुसार नाटककार द्वारा प्रशिक्षित जब रंगमंच पर संगीत एवं अभिनय आदि के द्वारा रस पैदा करके दर्शकों का मनोविनोद करते हुए उन्हें उपदेश और मानसिक शांति प्रदान करते हैं। तब इस प्रक्रिया को नाटक का रूप कहते हैं। नाटक एक सामूहिक प्रस्तुति है। नाटक की संरचना के माध्यम से एक तरफ छात्र इस दृश्यात्मक विद्या से स्वयं अपने को जोड़कर देखने के साथ ही अन्य विषयों की एकरसता को भी तोड़ने में सफल होगा। साथ ही सहृदय की सामूहिक अवधारणा में वह एक दर्शक के रूप में सात के लोगों की प्रतिक्रिया से अवगत होगा। जिससे उसे अपना आकलन करने में आसानी होगी। जिससे विषय के ज्ञान के साथ–साथ व्यवहारिकता का बहुत सहज सरल रूप में आसानी से क्रियान्वित हो सकेगा। नाटक शिक्षा के उद्देश्य मानव जीवन की विभिन्न परिस्थितियों एवं विभिन्न मानसिक अवस्था छात्रों को कराना छात्रों को प्रभावशाली एवं शुद्ध वार्तालाप की शिक्षा प्रदान करना साथ ही मानव स्वभाव का सम्यक ज्ञान कराना। नाटक के माध्यम से छात्रों को प्राचीन एवं आधुनिक संस्कृति का यथार्थ जीवन से परिचय कराना।

नाटक शिक्षा की प्रणालियाँ :–

नाटक शिक्षण की मुख्य पांच प्रकार की प्रणालियां है।

1. व्याख्या प्रणाली :–

इस विधि से अध्यापक समस्त नाटक का स्वयं वाचन करता है। और नाटक लेखन, पात्र, प्रयोजन, घटनाएं, कथावस्तु, कथाकथन, चरित्र चित्रण, भाषा शैली, भाव सौंदर्य आदि पर स्वयं ही प्रवचन करता चलता है। जिससे नाटक के विभिन्न पक्षों का सौंदर्य एवं उनकी विशेषताएं प्रकट हो जाएं। यह प्रणाली पुरानी है और छोटी कक्षाओं में इसके द्वारा नाटक शिक्षण सफल नहीं हो पाता। मोहन राकेश का नाटक आधे अधूरे एक मध्यवर्गीय परिवार की आंतरिक कलह और रिश्तो के साथ–साथ समाज में स्त्री के बीच बदलते परिवेश तथा एक दूसरे से दोनों की अपेक्षाओं को चित्रित करता है। यह नाटक सामाजिक पारिवारिक है इसमें परिवार झगडे होना एक दैनिक दिनचर्या का हिस्सा बना हुआ है। महेंद्रनाथ बहुत समय से व्यापार में असफल होकर घर पर बेकार बैठा है। और इसकी पत्नी सावित्री नौकरी करके घर चलाती है। कई तरह की परिस्थितियों और अपने अपने स्वभाव के कारण दोनों एक दूसरे से नफरत करते हैं। मगर फिर भी सामाजिक परिवारिक और रूढिगत ढांचो में फंसे रहने के कारण साथ रहने को मजबूर हैं। इस नाटक से यह शिक्षा मिलती है कि नारी पुरुष दोनों बराबर होने का दावा करते हैं, लेकिन बराबर नहीं

हो पाते। क्योंकि जब स्त्री रोजगार करती है उसमें अहम का भाव दर्शाया गया है। जो उचित नहीं है। नाटक के माध्यम से युवा पीढ़ी को शिक्षा देना एक सरल साधन है। जो देखा और सुना जाता है। वह मस्तिष्क पर अमित छाप छोड़ता है यही कारण है कि आधुनिक शिक्षा से शिक्षा में नाटक का अपना एक अलग महत्व है। 'स्वर्ग की झलक' में आधुनिक शिक्षा के दृष्टि दुष्परिणाम तथा विभागीय समस्या का चित्रण है। साथ ही आधुनिकता के पारिवारिक दायित्वहीन बुर्जुआ फंशन परस्ती की खिल्ली उड़ाई है और ऐसी नारियों से अभिभूत होने वाले पतियों और डर जाने वाले मध्यवर्गीय नौजवानों पर व्यंग भी है। नाटक के उद्देश्य भारतीय और पाश्चात्य दृ ष्टिकोण में पर्याप्त अंतर है। भारतीय आचार्यों ने नाटक में इस को प्रमुखता दी है। पाश्चात्य नाटकों में व्यक्त या अव्यक्त रूप में कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है। किसी प्रकार का जीवन मीमांसा विचार सामग्री के रूप में आता है। आंतरिक और बाह्या संघर्ष द्वारा ही दर्श या पाठक उस उद्देश्य को समझने में सफल होते हैं। आधुनिक नाट्य साहित्य एक लंबी प्रयोगात्मक परंपरा की देन है। जो हिंदी में भारतेंदु से लेकर प्रसाद मोहन, राकेश, लक्ष्मी नारायण लाल तथा भीष्म साहनी, सुरेंद्र वर्मा और स्वदेश दीपक इत्यादि एक लंबी परंपरा है। जिनके नाटक न सिर्फ पढ़े और पढ़ाए जाते हैं अपितु मंच भी निरंतर प्रस्तुत किए जाते हैं। जिसे लेकर प्रत्येक निदेशक निरंतर प्रयोगात्मक प्रक्रिया से गुजरता और इसी का लाभ कक्षा में पाठ शिक्षण के द्वारा उठाया जा सकता है। आज छात्र जिस प्रकार तकनीकी शिक्षा के पूर्व वैदिक परंपरा के शिक्षण कौशल से जुड़कर साहित्य के चिंतन को नया आयाम दिया है। जो आज कंप्यूटर तथा अन्य उपकरणों के द्वारा सबकी पहुंच में है। जिसे कहीं आसान तरीकों से सीखा भी जा सकता है। यह आज सशक्त सरल अभ्यास से सर्व सुलभ भी हो गया है किताबों की पूरी दुनिया साहित्य की विभिन्न विधाओं में उपस्थित है। जो रुचि ओर कल्पना की उड़ान के लिए आवश्यक जगह उपलब्ध करवाती है।

2. आदर्श नाटक प्रणाली :–

इस विधि से भी छात्रों का मार्गदर्शन कर सकते हैं। किंतु वाचक वस्तुतः वाचिक अभिनय होता है। और पात्रों के अनुकूल भाषा में उतार–चढ़ाव आता रहता है। इस प्रणाली में छात्रों का मनोरंजन हो जाता है। छात्र मूक श्रोता ही बने रहते हैं और समस्त कार्य शिक्षक संघ कर डालता है।

3. रंगमंच अभिनय प्रणाली

4. कथा विनय प्रणाली

5. युक्त प्रणाली

हिंदी नाट्य साहित्य में भारतेंदु और प्रसाद के बाद यदि लीक से हटकर कोई नाम उभरता है। तो वह मोहन राकेश का है। जिन्होंने आधुनिक हिंदी नाटक की विकास यात्रा में महत्वपूर्ण पड़ाव तय किये हैं किंतु मोहन राकेश का लेखन एक दूसरे धुवन्त पर नजर आता है। उनके नाटक शिक्षा जगत में सर्वाधिक प्रिय है। शिक्षकों को छात्रों को बताने के लिए एक सामाजिक परिवार की भूमिका बांधनी पड़ती है। उन्होंने हिंदी नाटक को अंधेरे बंद कमरे में बाहर निकाला और उसे युवकों के रमानी ऐन्द्रजालिक सम्मोहन से उभार कर एक नए दौर के साथ जोड़ कर दिखाया।

आज का स्वर नाटक की दृष्टि से आशावादी बन गया है मानव मूल्यों के प्रति अगाध निष्ठा के कारण आप आज की को कुहासा में किरण देख रहे हैं। इस बात पर डॉ. गिरीश रस्तोगी कहते हैं समकालीन नाटक और रंगमंच की दृष्टि से भी भारतेंदु की प्रासंगिकता इसलिए बढ़ जाती है क्योंकि इन्होंने नाटक के दृष्टव्य को अपनी कल्पना, परिकल्पना, रचना, पुनर्रचना के स्तर पर अनुभव किया था।'

निष्कर्ष :–

नाटक जन सामान्य की भावनाओं की अभिव्यक्ति का सबसे सशवन्त माध्यम है। रंगमंच पर प्रस्तुत किए जाने पर ही नाटक जीवंत का सप्राण हो जाता है। कथोपकथन को वास्तविकता रूप में उपस्थित के जाने पर दर्शक उन्हें ग्रहण करते हैं। रंगमंच पर नाटक की दुरुहता समाप्त हो जाती है। संम्वादों का संबंध जीवन से जुड़ा होता है। संवाद नाटक का प्राण होता है। अधिकार सुख कितना भी मादक होता है। सीधा मन में उतरता चला जाता है। इस संवाद से जो दर्शक बंधता है। अंत तक बैठा रह जाता है। वर्तमान शिक्षण कार्यों में इनके प्रयोग ने संभावनाओं के नए द्वार भी खोले हैं। इसकी महत्ता इसी से सिद्द हो जाती है कि अब सभी विषयों को नाटक के माध्यम से पढ़ाया जाये। आचरण तथा व्यवहार की शिक्षा नाटक के माध्यम से सर्वोत्तम ढंग से दी जा सकती है मिथक, पुराण और इतिहास की शिक्षा तो नाटक के माध्यम से जीवंत तथा साकार हो जाती है। दूरदर्शन पर तो इस तरह के प्रयोग को आत्म–सात करके बहुत समय से दूरस्थ

शिक्षा का पाठ्यक्रम चला करके दूर–दराज के क्षेत्रों को इससे जोड़ने का अभियान चला रहा है। इस दिशा में भारतेंदु, प्रसाद और हरिकृष्ण प्रेमी, मोहन राकेश लक्ष्मीनारायण, गिरीश कर्नाड, साहनी तथा सुरेंद्र वर्मा के अतिरिक्त अन्य नाटककारों की इस लंबी फेहरिस्त है जिनके नाटक का यथा स्थान प्रयोग किया जा सकता है।

संदर्भ :–

1. मोहन राकेश –आधे–अधूरे समीक्षा रूप।
2. डॉ. श्रीमती त्रिपाठी –हिंदी नाटकों पर पाश्चात्य प्रभाव, पृ. स.227
3. गोपाल कृष्ण कौल– नाटककार अश्क, पृ.स.167
4. गिरीश रस्तौगी– समकालीन हिंदी नाटक के संघर्ष चेतना, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़ संस्करण 1990, पृ. स. 5
5. उत्तरी भारत की संत परंपरा– परशुराम चतुर्वेदी, प्रकाशक– लीडर प्रैस, प्रयाग, 2001